जैन पुराण साहित्य

के० ऋषभचन्द्र

जिस प्रकार प्रारंभसे ही जिनवाणी(अर्हद्वचन)के चार विभाग किये गये हैं उसी प्रकार जैन साहित्यके भी। ये विभाग हैं—कथा, गणित, दर्शन और चारित्र संबंधी। श्वेताम्बर इनका धर्मकथानुयोग, गणितानुयोग, द्रव्यानुयोग तथा चरणानुयोगके नामसे और दिगम्बर प्रथमानुयोग, करणानुयोग, द्रव्यानुयोग तथा चरणानुयोगके नामसे परिचय देते हैं। इन विभागोंमें कथा-साहित्यको, जिसके अपर नाम धर्मकथानुयोग तथा प्रथमानुयोग हैं, प्रथम स्थान मिला है। इस अनुयोगको इतनी बड़ी महत्ता इसलिए दी गयी है कि इसके द्वारा ही साधारण व सामान्य जनतामें धर्मके बीज सरलता व विशाल पैमाने पर पनपाये जा सकते हैं। कथा एक ऐसा सरल उपाय है जिसका प्रभाव तुरन्त ही साधारण जन पर पड़ता है, अतः इसको इतना महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इसी कथानुयोग अथवा कथा-साहित्यका एक अंग पुराण-साहित्य है जिसकी चर्चा यहाँ पर की जा रही है।

जिनसेनाचार्यने अपने महापुराण(आदिपुराण)में पुराणकी व्याख्या 'पुरातनं पुराणं स्यात्'से की है। आगे यह भी बतलाया है कि वे अपने ग्रन्थमें तिरसठ शलाका पुरुषोंका पुराण कह रहे हैं। अन्य आचार्योंके मतका निर्देश करते हुए वे बतलाते हैं कि कोई कोई तीर्थंकरोंके ही चौबीस पुराण मानते हैं क्योंकि उनमें अन्य शलाका पुरुषों(चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव व प्रतिवासुदेव)का भी समावेश हो जाता है और इन सभी पुराणोंका जिसमें संग्रह हो वह महापुराण कहलाता है। कहनेका तात्पर्य यह कि जिसमें एक शलाका पुरुषका वर्णन हो वह पुराण तथा जिसमें अनेक शलाका पुरुषोंका वर्णन हो वह महापुराण कहलाता है। जिनसेनाचार्य आगे बतलाते हैं कि उनके ग्रन्थमें जिस धर्मका वर्णन है उसके सात अंग है—द्रव्य, क्षेत्र, तीर्थ, काल, भाव, महाफल और प्रकृत। तात्पर्य यह कि पुराणमें षड्द्रव्य, सृष्टि, तीर्थस्थापना, पूर्व और भविष्य जन्म, नैतिक और धार्मिक उपदेश, पुण्यपापके फल और वर्णनीय कथावस्तु अथवा सत्पुरुषके चरितका वर्णन होता है। जैन पुराणोंमें काव्यमय शैलीका भी समावेश हो गया है। यह तत्कालीन प्रभाव ही प्रतीत होता है। अन्यथा जिनसेनाचार्यकी महाकाव्यकी परिभाषामें पुराणके तत्त्व भी शामिल नहीं होते। वे महाकाव्यके लक्षण इस प्रकार बतलाते हैं:

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो प्राचीन कालके इतिहाससे सम्बन्ध रखनेवाला हो, जिसमें तीर्थंकर, चक्रवर्ती इत्यादि महापुरुषोंका चरित्र-चित्रण हो तथा जो धर्म, अर्थ और कामके फलको दिखानेवाला हो उसे महाकाव्य कहते हैं। जिनसेनाचार्यने अपने महापुराणको महाकाव्य भी माना है। कहनेका तात्पर्य यह कि महापुराणका रूप पुराणसे बृहत्काय होता है और जैन पुराणोंमें काव्यात्मक शैलीका समावेश भी हो गया है।

ऊपर कहा जा चुका है कि पुराणमें सत्पुरुषके चरितकी कथा-वस्तुका समावेश होता है। इसी चरितात्मक वस्तुके कारण ऐसी रचनाओंको चरित भी कहा गया है। श्वेताम्बरोंकी प्रायः जितनी भी रचनाएँ तीर्थंकरोंके जीवन संबंधी मिलती हैं उन्हें चरित ही कहा गया है, परन्तु दिगम्बर लेखकोंने उन्हें पुराण व चरित दोनों संज्ञाएँ दी हैं। इससे यह स्पष्ट है कि शलाका पुरुषोंके जीवन सम्बन्धी जो जो कृतियाँ रची गयीं उन्हें चाहे पुराण कहें या चरित कहें, इससे कोई भेद उपस्थित नहीं होता। कहनेका तात्पर्य यह कि चरित और पुराण एकार्थवाची ही है, यदि उनमें त्रेसठ महापुरुषोंमेंसे किसी एकका या अनेकका चरित वर्णित हो। आगे चलकर हम देखते हैं कि पुराण और चरित इस परिभाषामें अनुबद्ध नहीं रहें। शलाका पुरुषोंके अतिरिक्त अनेक महापुरुषोंके काल्पनिक चरितोंको भी पुराण या चरित कहा गया है। विशेषतः चरित बहुत ही विस्तृत अर्थमें प्रयुक्त हुआ हैं। चरितका अभिप्राय रहा है जीवनी और वह जीवनी चाहे शलाका पुरुषकी हो, कोई धार्मिक अथवा वीरपुरुषकी हो या किसी काल्पनिक पुरुषकी ही क्यों न हो, उन सबको चरितकी संज्ञा दी गयी है।

पुराण और महापुराण नामक जो जो रचनाएँ रची गयीं उन सबका आधार क्या रहा है? जिन-सेनाचार्यने तो महापुराणकी परिभाषामें यह बतलाया है कि महापुरुषों(तीर्थंकरादि)ने इसका उपदेश दिया है इस लिएइसे महापुराण कहते हैं। कहनेका तात्पर्य यह कि इन पुराणोंकी कथाएँ तीर्थंकरोंके मुखसे ही सुनी गयी थी और ये ही परंपरासे चली आ रही हैं। ऊपर हमने बतलाया है कि दिगंबरोंका प्रथमानुयोग ही श्वेताम्बरोंका धर्मकथानुयोग है। प्रथमानुयोग बारहवें अंग दृष्टिवादका एक विभाग भी माना गया है। उसमें तीर्थंकर, चक्रवर्ती और अन्य महापुरुषोंके वर्णन उपलब्ध थे। जैन कथासाहित्यके पुराणोंकी कथावस्तुका यह भी एक आदिस्रोत माना जाता है, किन्तु दृष्टिवादके लुप्त हो जानेके कारण प्रथमानुयोग अब उपलब्ध नहीं है। परंपरासे जो कुछ भी सुरक्षित रह सका वह आगम ग्रंथों तथा अन्य ग्रंथोंमें समाविष्ट हो गया ऐसी मान्यता है। अतः प्रथमानुयोगके पश्चात् जिन जिन ग्रंथोंकी कथा-सामग्रीके आधार पर आगे पुराण ग्रन्थ रचे गये उनमें समवायांग, ज्ञाताधर्मकथा, कल्पसूत्र, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, त्रिलोक-प्रज्ञप्ति तथा आवश्यक–निर्युक्ति,–चूर्णि, विशेषावश्यक भाष्य और वसुदेवहिण्डी उल्लेखनीय हैं।

जैसा कि भारतीय साहित्यके साथ होता आया है वैसे जैन साहित्यके भी कुछ प्राचीन ग्रन्थ अब तक भी उपलब्ध नहीं हो सके हैं। अन्य ग्रन्थोंमें उल्लेख मात्रसे ही उनका पता चलता है। इस प्रकारके पुराणोंमें विमलसूरिका हरिवंसचरिय, कवि परमेष्ठिका वागर्थसंगह-पुराण तथा चतुर्मुखके पउमचरिउ और हरिवंसपुराणु उल्लेखनीय हैं। उपलब्ध पुराण-साहित्य पर दृष्टिपात करें तो मालूम होगा कि ये रचनाएँ विक्रमकी छठीं शताब्दीसे लगाकर १८वीं शताब्दी तक पनपती रही हैं। जिस प्रकार जैनोंका पुरानामें पुराना साहित्य प्राकृत भाषामें उपलब्ध है उस प्रकार पुराण साहित्य भी। अपने धर्म-प्रचारमें साधारण जनको प्रभावित करनेके लिए उन लोगोंकी बोलचालकी जो भाषा थी उसे ही अपने साहित्यका माध्यम बनानेमें जैन लोग अग्रणी रहे हैं। इसलिए समय समय पर बदलती हुयी भाषाओंमें पुराण साहित्यका सृजन हुआ है। प्राकृतके बाद जब संस्कृतका अधिक प्रभाव बढ़ा तो उस भाषामें भी पुराणोंकी रचना करनेमें जैन लोग पीछे नहीं रहें। उसके पश्चात् जब अपभ्रंश भाषाओंने जोर पकडा तब अपभ्रंश रचनाएँ भी होने लगीं। इस प्रकार हम देखेंगे कि प्राकृत (महाराष्ट्री) पुराणोंका रचनाकाल छठीं शताब्दीसे पन्द्रहवीं तक, संस्कृत

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुराणोंका आठवींसे उन्नीसवीं तक और अपभ्रंश पुराणोंका दसवींसे सोलहवीं शताब्दी तक रहा है। प्रचुरताकी दृष्टिसे प्राकृत, संस्कृत व अपभ्रंश पुराणोंका उत्कृष्ट काल क्रमशः बारहवीं–तेरहवीं, तेरहवींसे सत्तरहवीं और सोलहवीं शतीका रहा है। इन सबमें भी संस्कृत कृतियोंकी संख्या सर्वोपरि है। प्रायः ये सभी रचनाएँ एक ही भाषामें हैं, परंतु किसी किसी प्राकृत रचनामें कहीं कहीं पर संस्कृत व अपभ्रंश, तो अपभ्रंश रचना में संस्कृत व प्राकृत और उनमें देशी भाषाओंके शब्द भी यत्रतत्र मिलते हैं। ये रचनाएँ अधिकतर पद्यात्मक हैं, परंतु गद्यात्मक रचनाओंका सर्वथा अभाव नहीं है और कुछ कृतियोंमें गद्य और पद्यका मिश्रण भी मिलता है।

विक्रमकी छठीं शताब्दीसे जब जैन पुराणोंकी रचना प्रारंभ हुआी तब तक ब्राह्मणोंके मुख्य पुराणोंकी रचना हो चुकी थी। इसलिए उस साहित्य-शैलीके दर्शन जैन पुराणोंमें भी होते हैं। साथ ही साथ यह भी ध्यान देनेकी वस्तु है कि उस समय तक काव्यात्मक शैलीका प्रादुर्भाव हो चुका था तथा संस्कृत साहित्यमें उत्तरोत्तर कालमें उत्कृष्ट रचनाएं बनती जा रही थीं। इस प्रवाहका प्रभाव जैन पुराण-साहित्य पर भी पड़ा है। जिनसेनाचार्यने तो जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है काव्यतत्त्वको भी पुराणमें स्थान दे दिया है। इस समकालीन प्रभावके कारण जैन पुराणोंमें हम देखेंगे कि कविकी प्रतिभाके अनुसार उन रचनाओंमें छंद, अलंकार, रस–भाव आदि काव्य-गुणों तथा सूक्तियों और सुभाषितोंका तरतम पाया जाता है। कुछ संस्कृत रचनाएँ तो महाकाव्यात्मक शैलीके अच्छे उदाहरण हैं। उनमें प्राकृतिक दृश्योंका वर्णन और रसभावोंका कलात्मक चित्रण पाया जाता है। जैन पुराणोंमें पौराणिक शैली और काव्यात्मक शैलीका ऐसा सम्मिश्रण हो गया है कि वह हमें ब्राह्मण पुराणोंमें कम मात्रामें दृष्टिगोचर होता है।

जैन पुराणोंकी कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं: प्रारंभमें तीनों लोक, काल-चक्र व कुलकरोंके प्रादुर्भावका वर्णन होता है। उसके पश्चात् जम्बूद्वीप और भारतदेशका वर्णन करके तीर्थस्थापना तथा वंशविस्तार दिया जाता है। तत्पश्चात् संबंधित पुरुषके चरितका वर्णन प्रारंभ होता है। ये सभी वर्णन एकसे नहीं पाये जाते। कभी संक्षिप्त तो कभी विस्तारसे और कभी कभी सिर्फ उल्लेखमात्रके रूपमें ही। इसके अतिरिक्त उनमें अनेक पूर्वभवोंका विस्तारसे या संक्षेपमें वर्णन पाया जाता है। पूर्वभवकी कथाओंके साथ साथ प्रसंगानुसार अन्य अवान्तर कथाओंका भी उनमें समावेश हुआ है। इस प्रकार उनमें प्रचलित लोककथाओंके भी दर्शन होते हैं। ये सभी अवान्तर कथाएँ कभी कभी एक तृतीयांश तो कभी आधेसे भी अधिक भाग लिए हुए रहती हैं। साथ ही साथ उनमें उपदेशोंकी कहीं संक्षिप्तता तो कहीं भरमार रहती है। उनमें जैन सिद्धान्तका प्रतिपादन, सत्कर्म-प्रवृत्ति और असत्कर्म-निवृत्ति, संयम, तप, त्याग, वैराग्य आदिकी महिमा, कर्म-सिद्धान्तकी प्रबलता इत्यादि पर भार रहता है। इन प्रसंगों पर मुनियोंका प्रवेश भी पाया जाता है। इनके अतिरिक्त शेष भागमें तीर्थंकरकी नगरी, मातापिताका वैभव, गर्भ, जन्म, अतिशय, क्रीडा, शिक्षा, दीक्षा, प्रव्रज्या, तपस्या, परिषह, उपसर्ग, केवलप्राप्ति, समवसरण, धर्मोपदेश, विहार, निर्वाण इत्यादिका वर्णन संक्षेपमें या विस्तारसे सरलरूपमें या कल्पनामय अथवा लालित्य और अलंकारमय रूपमें पाया जाता है। सांस्कृतिक दृष्टिसे इन ग्रंथोंमें भाषातत्त्वका विकास, सामान्य जीवनका चित्रण तथा रीतिरिवाज इत्यादिके दर्शन होते हैं जो काफी महत्त्वपूर्ण हैं।

भारतीय जनताको रामायण और महाभारत बहुत ही प्रिय रहे हैं और जैन पुराण साहित्यका श्रीगणेश भी इन्हीं दो ग्रंथोंसे होता है।

उपलब्ध जैन पुराणसाहित्यमें प्राचीनतम कृति प्राकृत भाषा में है। यह विमलसूरि (५३० वि. सं०) की पउमचरियं (पद्मचरितम्) नामक रचना है। इसमें आठवें बलदेव दाशरथी राम (पद्म), वासुदेव लक्ष्मण तथा प्रतिवासुदेव रावणका चरित वर्णित है। कितनी ही बातोंमें इसकी कथा वाल्मीकि-रामायण-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से भिन्न है। संस्कृत रामायणसे इस भिन्न रामायणको रचनेका क्या उद्देश्य था? इस दृष्टिसे देखे तो तीन मूलभूत कारण प्रत्यक्ष नजर आते हैं। एक तो यह कि रामकी जो प्रचलित लोककथा थी उसको ब्राह्मणोंने जिस प्रकार हिन्दू रूप दिया उसी प्रकार जैनोंने अपने मतावलम्बियोंके लिए उसे अपना धार्मिक रूप दिया। दूसरी विशेषता यह कि उसमें वानरों और राक्षसोंको पशुओंकी तरह चित्रित किया गया था जो परंपराके प्रतिकूल था क्योंकि वे मनुष्य जातियाँ ही थीं। तीसरा कारण यह कि रामकथा-संबंधी कुछ ऐसी सामग्री भी विमलसूरिको मिली जो वाल्मीकि-रामयणमें उपलब्ध नहीं थी या कुछ भिन्न थी, जैसे रामका स्वेच्छापूर्वक वनवास, सुवर्ण मृगकी अनुपस्थिति, सीताका भाई भामण्डल, हनुमानके अनेक विवाह, सेतुकी अनुपस्थिति इत्यादि। यह रचना गाथाबद्ध हैं तथा ११८ उद्देशोंमें विभक्त है। कहीं कहीं पर अलंकारोंके प्रयोग तथा रसभावात्मक वर्णनोंके होते हुए भी इसकी शैली रामायण व महाभारत जैसी ही है।

संस्कृत भाषामें भी प्रथम जैन पुराण रामसंबंधी है जो रविषेणाचार्य(७३५ वि० सं०)का पद्मचरित है। इसमें १२३ पर्व हैं तथा कुछ वर्णनात्मक विस्तारके सिवाय यह विमलसूरिके पउमचरियकी प्रतिकृति मात्र है। इसी कथाका अनुसरण करनेवाला सकलकीर्तिके शिष्य जिनदास(सोलहवीं शती)का रामदेव-पुराण है जो गद्यात्मक है। देवविजयगणिका पद्मपुराण १६५२ वि० सं०में रचा गया था। भट्टारक सोमसेन-के रामपुराण (सं० १६५६) पर गुणभद्रकी रामकथा(उत्तरपुराण)का भी प्रभाव है। अन्य रामपुराण-कारोंमें भ० धर्मकीर्ति (सं० १६६९), चन्द्रसागर, चन्द्रकीर्ति आदि उल्लेखनीय हैं।

प्राकृत व संस्कृतकी तरह अपभ्रंश भाषामें भी प्रथम उपलब्ध जैन पुराण पउमचरिउ है जो स्वयंभू-देव(८९७–९७७ वि० सं०)की रचना है। यह पाँच काण्डों तथा नब्बे संधियोंमें विभक्त है। कथा रविषेणाचार्यकी कृतिके अनुसार ही है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें उत्कृष्ट संस्कृत काव्यशैलीका अनुसरण हुआ है। कवि रइधू(१५वीं १६ वीं शताब्दी)ने भी अपभ्रंशमें पद्मपुराणकी रचना की है।

कालकी दृष्टिसे रामायणके पश्चात् महाभारत संबंधी कथाकृतियोंकी गणना जैन पुराण साहित्य-में होती है। जैन साहित्यमें ये रचनाएँ हरिवंशपुराण या पाण्डवपुराणके नामसे विख्यात हैं। कुवलय-मालामें जो उल्लेख है उससे अनुमान किया जाता है कि इस विषय पर भी प्रथम कृति प्राकृतमें ही रची गयी थी और उसके कर्ता भी विमलसूरि थे। इन पुराणोंमें २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ, वासुदेव कृष्ण, बलदेव, जरासिन्धु तथा कौरव–पाण्डवोंका वर्णन है।

उपलब्ध साहित्यमें जिनसेनकृत (८४० वि० सं०) संस्कृत हरिवंशपुराणका प्रथम नम्बर आता है। इसमें ६६ सर्ग हैं। यह रचना विमलसूरिकी संभावित कृति पर आधारित मानी जाती है। सकलकीर्ति-(१४५०–१५१० वि० सं०)का हरिवंशपुराण ३९ सर्गोंमें विभक्त है। इसमें आधेसे अधिक सर्ग उनके शिष्य जिनदास द्वारा लिखे गये हैं। भ० श्रीभूषणका हरिवंशपुराण सं० १६७५की रचना है।

तेरहवीं शताब्दीमें रचा गया देवप्रभसूरिका पाण्डवचरित्र १८ सर्गोंमें विभक्त है। शुभचन्द्रका (१६०८ वि० सं०) पाण्डवपुराण जैन महाभारत भी कहलाता है। राजविजयसूरिके शिष्य देवविजय गणी-(१६६० वि० सं०)ने देवप्रभसूरिके पाण्डवचरित्रका गद्यमें रूपान्तर कर अपनी कृति बनायी थी। अमरचन्द्र(१३ वीं शताब्दी)की रचना बालभारत भी उल्लेखनीय है।

हरिवंश पुराणके अन्य कर्ताओंमें ब्र० जिनदास (१६ वीं शती), जयसागर, कवि रामचन्द्र (सं० १५६०से पूर्व) और भ० धर्मकीर्त्ति (सं० १६७१) तथा पाण्डव चरित्र संबंधी जयानन्द, विजयगणी, शुभ-वर्धनगणी और पाण्डव पुराणके रयिचताओंमें भ० शुभचन्द्र (सं० १६१८), श्रीभूषण (सं० १६५७) और भ० वादिचन्द्र(१७वीं शती)के नाम उल्लेखनीय हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हरिवंश संबंधी अपभ्रंशकी प्रथम कृति स्वयंभूदेवकी है जिसका अपरनाम रिट्ठणेमिचरिउ है। यह तीन कांडोंमें विभक्त है तथा ११२ संधिवाला ग्रन्थ है। इसकी कथाका आधार जिनसेनका हरिवंशपुराण है। धवल(११वीं-१२वीं शताब्दी वि० सं०)का हरिवंशपुराण ११२ संधियोंमें काव्यात्मक ढंगसे लिखा गया है। सोलहवीं शताब्दीकी अन्य दो कृतियाँ यशःकीर्त्ति और श्रुतकीर्त्तिकीप्र प्राप्त है। प्रथम १३ और द्वितीय ४४ संधियोंमें विभक्त हैं। कवि रइधूने भी हरिवंशपुराणकी रचना की है।

रामायण और महाभारतके पश्चात् कालकी दृष्टिसे महापुराणोंकी बारी आती है, जिनमें त्रिषष्टि-शलाका पुरुषों अथवा चौबीस तीर्थंकरों आदिके चरितोंका वर्णन आता है। इनकी शुरूआत भी प्राकृत भाषासे ही होती है। शीलांकाचार्य(९२५ वि० सं०)का चउपन्नमहापुरिसचरिय ऐसी ही एक रचना है। ग्रन्थके शीर्षकसे प्रतीत होता है कि नौ प्रतिवासुदेवोंको शलाका पुरुषोंमें नहीं गिना गया है, जैसा कि समवायांगसे भी सूचित है। यह गद्य–प्रधान रचना है। इसकी रामकथा पर वाल्मीकी रामायणका प्रभाव शूर्पणखाके नाम तथा स्वर्णमृगसे स्पष्ट है तथापि शेष कथा बिमलसूरिके अनुसार है। भद्रेश्वर(१२–१३वीं शताब्दी)की कहावलिमें शलाका पुरुषोंका चरित वर्णित है। यह रचना गद्यप्रधान है। इसकी रामकथामें रावणके चित्र का उल्लेख ध्यान देने योग्य है। महापुरुष-चरितकारोंमें आम्रसूरिका भी नाम लिया जाता है।

संस्कृतमें इस संबंधमें महत्त्वपूर्ण रचना महापुराण है। इसका प्रथम भाग आदिपुराण जिनसेनाचार्य (१० शताब्दी) कृत है तथा द्वितीय भाग उत्तरपुराण उनके शिष्य गुणभद्रकी रचना है। उत्तरपुराणकी रामकथा वाल्मीकिरामायण व पउमचरियसे भिन्न है। आदिपुराणमें प्रथम तीर्थंकर व प्रथम चक्रवर्त्ती तथा उत्तरपुराणमें शेष शलाका पुरुषोंके चरित्र वणित हैं। आचार्य मल्लिषेणने ११०४ वि० सं०में अपने महापुराणकी रचना की थी। पन्द्रहवीं शताब्दीके भ० सकलकीर्त्ति आदिपुराण और उत्तरपुराणके रचयिता है। हेमचन्द्राचार्य(१३वीं शती प्रथमपाद)का त्रिषष्टि-शलाका-पुरुष-चरित १० पर्वोंमें विभक्त है। इसका अन्तिम भाग परिशिष्ट–पर्व ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। आशाधर (१२९२वि० सं०)के त्रिषष्टि-स्मृति-शास्त्रमें शलाका पुरुषोंका संक्षिप्त वर्णन है। त्रिषष्टि-शलाका-पुरुष-चरित विषयक गद्यात्मक रचनाकारोंमें विमलसूरि और वज्रसेन स्मरणीय हैं। जिनसेनके महापुराण पर ललितकीर्त्ति-(१९वीं शती)की संस्कृत टीका तथा पुष्पदंतके उत्तरपुराण पर प्रभाचन्द्र(सं० १०८०)की टीका उपलब्ध हैं। पुराणसारसंग्रह दामनन्दिकी रचना है जिसमें संक्षेपमें शलाका पुरुषोंका वर्णन है। वैसे मुनि श्रीचन्द्र ११वीं शती और सकलकीर्तिके पुराणसार गद्यात्मक रूपमें उपलब्ध हैं।

चतुर्विंशतिजिनचरित जिनदत्तसूरिके शिष्य अमरचन्द्र(१३वीं शती)की रचना है जिसमें क्रमशः चौबीस तीर्थंकरोंके चरित दिये गये हैं। रायमल्लाभ्युदय (१६१५ वि० सं०) पद्मसुन्दरकी रचना है इसमें भी तीर्थंकरोंके चरित हैं। इस सम्बन्धमें केशवसेन (सं० १६८८) व प्रभाचन्द्रके कर्णामृतपुराण उल्लेखनीय हैं।

अपने महापुरुषचरितमें मेरुतुंगाचार्यने (१४वीं शती) ऋषभनाथ, शांतिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ तथा महावीरस्वामीके चरितोंका वर्णन किया है। इसीको काव्योपदेशशतक व धर्मोपदेशशतक भी कहा गया है।

अपभ्रंशमें महापुराण विषयक प्रथम कृति पुष्पदंतका (१०२२ वि० सं०) तिसट्ठि-महापुरिस-गुणलंकारु है। इसमें प्रथम ३७ संधियोंमें आदिपुराण तथा शेष ६५ सन्धियोंमें उत्तरपुराणकी कथासामग्री है। रामकथामें गुणभद्रका अनुसरण है। कविकी असाधारण काव्यप्रतिभाके इसमें दर्शन होते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पद्मपुराण, हरिवंशपुराण तथा महापुराणोंके पश्चात् अलग अलग तीर्थंकरोके जीवनचरित बहुतायतसे पाये जाते हैं। १०वीं शतीसे १८वीं शती तक ऐसी रचनाएँ होती रहीं। १२वीं और १३वीं शती ऐसे साहित्यमें काफी सम्पन्न रही हैं, वैसे १५वीं से १७वीं शती भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। बहुलताकी दृष्टिसे अधिकसे अधिक कृतियाँ शान्तिनाथ पर उपलब्ध हैं। द्वितीय श्रेणिमें नेमि और पार्श्वजिन संबंधी कृतियोंको रखा जा सकता है। तृतीय स्थानमें आदि जिन ऋषभ, आठवें चन्द्रप्रभ और अन्तिम जिन महावीरके चरितोंकी संख्या उल्लेखनीय हैं।

प्राकृत भाषामें आदि तीर्थंकर ऋषभ पर प्रथम रचना अभयदेवके शिष्य वर्धमानसूरि (११६०वि० सं०)की प्राप्त है। ११००० श्लोक प्रमाण यह ग्रन्थ पांच परिच्छेदोंमें विभक्त है। भुवनतुंगका ऋषभदेव चरित ३२३ गाथाओंमें निबद्ध है।

अमरचन्द्र(१३वीं शती)का संस्कृत पद्मानन्दकाव्य १९ सर्गोंवाला आदिनाथके जीवनचरित्र संबंधी है। विनयचन्द्रका आदिनाथचरित्र १४७४ वि० सं० की रचना है। अन्य रचनाएँ भ० सकलकीर्त्ति (१५वीं शती), चन्द्रकीर्त्ति (१७वीं शती), शान्तिदास, धर्मकीर्ति आदिकी हैं। हस्तिमल्लने गद्यात्मक आदिनाथ पुराण लिखा। ललितकीर्त्तिका आदिपुराण जिनसेनाचार्यके आदिपुराण पर टीका मात्र है। नेमिकुमारके पुत्र वाग्भटने काव्यमीमांसामें अपने ऋषभदेवचरितका उल्लेख किया है।

अपभ्रंशमें रइधू (१६वीं शताब्दी वि० सं०)का आदिपुराण उल्लेखनीय है। उसका अपरनाम मेघेश्वर चरित है।

द्वितीय तीर्थंकर संबंधी अजितनाथपुराण बुधराघवके शिष्य अरुणमणि(१७१६ वि० सं०)की संस्कृत रचना है। अपभ्रंशमें सं० १५०५की विजयसिंहकी रचना उपलब्ध है।

तृतीय तीर्थंकर पर संभवनाथचरित्रकी रचना मेरुतुंगसूरिने सं० १४१३में की थी। एक तेजपालकी इसी नामकी अपभ्रंश रचना है।

चतुर्थ तीर्थंकर अभिनन्दनके चरितों का उल्लेख मात्र मिलता है।

पाँचवें जिन पर सुमतिनाथ चरितके रचनाकार विजयसिंहके शिष्य सोमप्रभ(१२वीं शताब्दी) थे। यह ग्रन्थ प्राकृतमें ९६२१ ग्रंथाग्र प्रमाण है। संस्कृतमें भी इस विषयक रचनाका उल्लेख आता है।

छठें तीर्थंकरका पद्मप्रभचरित प्राकृतमें देवसूरिने १२५४ वि० सं० में रचा। संस्कृतमें शुभचन्द्रका पद्मनाभपुराण १७वीं शतीका है। विद्याभूषण और सोमदत्तके भी पद्मनाभपुराण प्राप्त हैं। देवप्रभसूरिके शिष्य सिद्धसेनने भी पद्मप्रभचरित्र रचा था।

सातवें तीर्थंकर संबंधी सुपार्श्वनाथचरित प्राकृतमें हर्षपुरीय गच्छके लक्ष्मणगणि(११८८ वि० सं०)ने रचा। यह रचना उत्कृष्ट कोटिकी करीब ९००० गाथा प्रमाण है। देवसूरिकी भी प्राकृत रचना मिलती है।

आठवें जिन चन्द्रप्रभ पर प्राकृतमें वीरसूरि (११३८ वि० स०), येशोदेव (सं० ११७८), चंद्रसूरिके शिष्य हरिभद्र (१२२३) तथा जिनवर्धनसूरिकी कृतियाँ हैं। अपभ्रंश रचना यशःकीर्तिकी (१५वीं १६वीं शती) ११ संधियोंमें प्राप्त है। देवेन्द्र(सं० १२६४)की रचना संस्कृत व प्राकृतमय है। संस्कृतमें असग (११वीं शती), वीरनन्दि (११वीं शती), गुणरत्नके शिष्य सर्वानंद (सं० १३०२), शुभचन्द्र (१६वीं १७वीं शती) तथा पंडिताचार्य और दामोदर कवि(सं० १७२७)की रचनाएँ उपलब्ध हैं। अन्धसेनके चन्द्रप्रभचरितका भी उल्लेख आता है। १७वीं शताब्दीकी रचना पं० शिवाभिरामकी भी मिलती है जो सात सर्गोंमें विभक्त है।

नौवें तीर्थंकर पुष्पदन्तके जीवनपर कोई रचना नहीं मिलती। नन्दिताढ्यकृत गाथालक्षणके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टीकाकार रत्नचन्द्रने उसमें आये हुए दो पद्यों पर टीका करते हुए बतलाया है कि ये पद्य एक प्राकृत रचना पुष्पदन्तचरितमेंसे लिये गये हैं।

दसवें तीर्थंकर शीतलनाथके चरितोंके बारेमें सिर्फ उल्लेख ही प्राप्त हैं।

ग्यारहवें जिन पर श्रेयांसचरित जिनदेवके शिष्य हरिभद्रने सं. ११७२में तथा अजितसिंहसूरिके शिष्य देवभद्रने ११००० ग्रन्थाग्र प्रमाण प्राकृतमें रचे थे। संस्कृतमें मानतुंग(सं० १३३२)की कृति प्राप्त है। सुरेन्द्रकीर्तिके श्रेयांसपुराणका भी उल्लेख आता है।

बारहवें जिन पर वासुपूज्यचरित प्राकृतमें ८००० ग्रन्थाग्र प्रमाण चन्द्रप्रभकी रचना है तथा संस्कृतमें वर्द्धमानसूरि(सं० १२९९)की करीब ६००० ग्रन्थाग्र प्रमाण।

तेरहवें तीर्थंकरका विमलचरित प्राकृतमें रचे जानेका उल्लेख आता है। संस्कृतमें ज्ञानसागरने खंभातमें सं० १५१७में ५६५० ग्रन्थाग्र प्रमाण पांच सर्गोंमें विमलनाथचरित रचा था। कृष्णदासका विमलनाथपुराण १० सर्गोंमें विभक्त है तथा २३०० श्लोक प्रमाण है। इन्द्रहंसगणिने सं० १५७८में संस्कृतमें विमलचरित रचा था। रत्ननन्दिका भी विमलनाथ-पुराण मिलता है।

चौदहवें जिन पर प्राकृतमें अनन्तनाथ चरितके लेखक आम्रदेवके शिष्य नेमिचन्द्रसूरि है जिन्होंने सं० १२१३में १२०० गाथा प्रमाण अपना ग्रन्थ लिखा था। वासवसेन भी अनन्तनाथपुराणके रचयिता माने जाते हैं।

पन्द्रहवें तीर्थंकर धर्मनाथ पर प्राकृतरचनाका उल्लेख मात्र है। हरिचन्द्रकृत एक उत्कृष्ट संस्कृत काव्य है जो २१ सर्गोंमें निबद्ध है। इसका नाम धर्मशर्माभ्युदय काव्य है जो ११वीं १२वीं शतीकी रचना मानी जाती है। इस पर शिशुपालवध, गउडवहो और नैषधीय चरितका प्रभाव स्पष्ट है। नेमिचन्द्र (सं० १२१६) और सकलकीर्त्ति(१५वीं शती)की रचनाओंके भी उल्लेख मिलते हैं।

सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथके जीवन संबंधी कई चरित रचे गये प्रतीत होते हैं। प्राकृतमें पहली कृति देवचन्द्रसूरि(सं० ११६०)की मिलती है। यह १२००० ग्रन्थाग्र प्रमाण है। मुनिभद्रकी रचना सं० १४१०की है। सोमप्रभसूरिकी भी प्राकृत रचना मिलती है। अपभ्रंशमें महीचन्द्रने दिल्लीमें सं० १५८७में संतिणाहचरिउ रचा था। संस्कृतमें असग(११वीं शती)का शान्तिनाथपुराण १६ सर्गोंमें निबद्ध है। इनका एक लघु शान्तिपुराण भी मिलता है। अजितप्रभसूरि(सं० १३०७)का शान्तिनाथ-चरित ६ सर्गोंमें विभक्त ५००० श्लोक प्रमाण है। मुनि देवसूरिकी कृति (सं० १३२२) देवचन्द्रसूरिकी प्राकृत रचना पर आधारित मानी जाती है। माणिक्यचन्द्रकी रचना (१३वीं शती) ८ सर्गोंमें करीब ६००० ग्रन्थाग्र प्रमाण मिलती है। सकलकीर्त्ति (१५वीं शती) तथा श्रीभूषण(सं० १६५९)के भी शान्तिनाथ-पुराण उपलब्ध हैं। प्रथम १६ सर्ग प्रमाण है। कनकप्रभकी रचना ४८५ तथा रत्नशेखरसूरिकी करीब ७००० ग्रन्थाग्र प्रमाण प्राप्त हैं। गद्यमय रचनाकारोंमें भावचन्द्र (सं० १५३५) तथा उदयसागर उल्लेखनीय हैं। अन्य ग्रन्थकारोंमें ज्ञानसागर, हर्षभूषणगणि, वत्सराज, शान्तिकीर्त्ति, गुणसेन, ब्रह्मदेव, ब्रह्मजयसागर इत्यादि हैं। मेघविजयका शान्तिनाथचरित तो एक पादपूर्ति काव्य है जो नैषधचरितके पादोंके आधारसे शांतिनाथके जीवनचरितका वर्णन करता है।

सत्तरहवें कुन्थुनाथके चरितकारोंमें पद्मप्रभ अथवा विबुधप्रभसूरि(१३वीं शती)का नाम आता है जिन्होंने अपनी रचना संस्कृतमें की थी। प्राकृतमें भी किसीने ग्रन्थ रचा था और एक अनाम चरित भंडारमें ही होनेका उल्लेख है।

अठारहवें अरनाथ पर प्राकृत और संस्कृतमें रचनाएँ की गयी थी परंतु अभी उपलब्ध नहीं हैं।

उन्नीसवें जिन मल्लिनाथके प्राकृत चरितकारोंमें जिनेश्वरसूरि(सं० ११७५)का नाम आता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इनकी रचना ५५५५ ग्रंथाग्र प्रमाण है। चन्द्रसूरिके शिष्य हरिभद्रकी कृति तीन अध्यायोंमें ९००० ग्रन्थाग्र प्रमाण है। भुवनतुंगसूरिका ग्रन्थ ५०० ग्रंथ प्रमाण तथा एक और अनाम कृति १०५ ग्रंथाग्र प्रमाण उपलब्ध हैं। अपभ्रंशमें जिनप्रभसूरिकी ५० पद्यप्रमाण रचना है। जयमिश्रहल्का भी मल्लिनाथ पुराण उपलब्ध है। संस्कृतमें प्रद्युम्नसूरिके शिष्य विनयचन्द्रका मल्लिनाथ चरित ४२५० ग्रंथाग्र प्रमाण ८ सर्गोंमें निबद्ध है। यह सं० १४७४ के आसपासकी रचना है। सकलकीर्त्ति (१५वीं शती) भी मल्लिनाथ पुराणके रचयिता है। अन्य ग्रन्थकारोंमें शुभवर्धन, विजयसूरि, प्रभाचन्द्र व नागचन्द्र स्मरणीय हैं।

बीसवें तीर्थंकर पर श्री चन्द्रसूरिने प्राकृत में ११००० गाथा-प्रमाण मुनिसुव्रतनाथचरित सं० ११९३-में रचा था। पद्मप्रभकी संस्कृत कृति (सं० १२९४) ५५५५ ग्रन्थाग्र प्रमाण तथा मुनिरत्नसूरिकी रचना २३ सर्गोंमें निबद्ध करीब ७००० ग्रंथाग्र प्रमाण हैं। कृष्णदासका मुनिसुव्रतपुराण (सं० १६८१) २३ सर्गोंमें समाप्त हुआ तथा अर्हद्दासका १० सर्गोंमें जिसका अपर नाम काव्यरत्न है। केशवसेन, सुरेन्द्रकीर्त्ति तथा हरिषेण अन्य पुराणकार गिने गये हैं।

इक्कीसवें जिन संबंधी नेमिनाथपुराण सकलकीर्तिकी संस्कृत रचना है। अन्य नमिचरितोंके उल्लेख मात्र मिलते हैं।

बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथके चरितोंकी विपुलता पायी जाती है। प्राकृत रचनाओंमें जिनेश्वरसूरिका नेमिनाथ चरित सं० ११७५की कृति है। रत्नप्रभसूरिकी गद्यपद्यमय रचना १३६०० ग्रन्थाग्र प्रमाण ६ अध्यायों-में विभक्त है। इसका रचना-काल वि० सं० १२३३ है। तीसरी रचना मलधारी हेमचन्द्र(१२वीं शती)की ५१०० ग्रन्थाग्र प्रमाण है। संस्कृतमें प्रथम नंबर सूराचार्यका आता है जिन्होंने सं० १०९०में नेमिनाथ-चरित रचा। यह द्विसन्धानात्मक है और तीर्थंकर ऋषभ पर भी इसका अर्थ घटित होता है। ऐसा ही द्वितीय ग्रन्थ अजितदेवके शिष्य हेमचन्द्रसूरिका है जिसका नाम नेमिद्विसन्धान काव्य है। सोमके पुत्र वाग्भट-(१२वीं शती)का नेमिनिर्वाणकाव्य १५ सर्गोंमें विभक्त है। यह महाकाव्य शैलीकी एक उत्कृष्ट रचना है। उदयप्रभसूरिकी २१०० ग्रन्थाग्र प्रमाण रचना सं० १२९९के आसपासकी है। उपाध्याय कीर्तिराज (सं०-१४९५)का नेमिनाथ चरित १२ सर्गोंमें निबद्ध है तथा ब्रह्म नेमिदत्त(सं० १५७५)का नेमिनाथ पुराण १६ अध्यायोंमें। गुणविजयकृत चरित (सं० १६६८) गद्यात्मक है तथा १३ अध्यायोंमें विभक्त है। संगनके पुत्र विक्रमका नेमिदूतकाव्य एक विशेष कलाकृति है जिसमें मेघदूतके आधार पर समस्यापूर्ति की गयी है। तिलकाचार्यकी रचना ३५०० ग्रन्थाग्र प्रमाण है। भोजसागर, नरसिंह, हरिषेण और मंगरसकी भी कृतियां मिलती हैं। अपभ्रंशमें चन्द्रसूरिके शिष्य हरिभद्रका नेमिणाहचरिउ (सं० १२१६) ८०३२ ग्रन्थाग्र प्रमाण पाया जाता है। महाकवि दामोदरकी रचना सं० १२८७की है। लक्ष्मणदेवकी कृति सं० १५१०के पूर्व-की है तथा वह १३ कडवक प्रमाण ४ संधियोंमें निबद्ध है।

तेईसवें जिन संबंधी देवभद्रगणिका प्राकृतमें रचा गया पार्श्वनाथचरित (सं० ११६८) गद्य-पद्य मिश्रित है तथा ९००० ग्रन्थाग्र प्रमाण ५ उद्देशोंमें विभक्त है। नागदेवने पार्श्वनाथपुराण रचा था तथा एक अनाम कृति पार्श्वनाथदशभवचरित नामक २५६४ गाथा प्रमाण मिलती है। संस्कृतमें प्राचीन रचना जिनसेनकृत पार्श्वाभ्युदय (१०वीं शती) है जो एक उत्तम काव्य है। इसमें मेघदूतके पद्योंका समावेश किया गया है। वादिराजका पार्श्वनाथपुराण (सं० १०८२) भी उपलब्ध है। गुणभद्रसूरिके शिष्य सर्वानन्द-सूरिकी रचना करीब १२वीं शताब्दीकी है। माणिक्यचन्द्रका पार्श्वनाथचरित (सं० १२७६) १० सर्गोंमें निबद्ध ५२७८ ग्रन्थाग्र प्रमाण है तथा गुणरत्नके शिष्य सर्वानन्द(सं० १२९१)का ५ सर्गोंमें विभक्त है। भावदेवसूरिने सं० १४१२ में ६४०० ग्रन्थाग्र प्रमाण चरित लिखा था। विनयचन्द्रकी रचना (१५वीं शती)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४७०९ ग्रन्थाग्र प्रमाण है। पद्मसुन्दरका (सं० १६१५) पार्श्वनाथकाव्य ७ सर्गोंमें निबद्ध मिलता है। हेमविजयने सं० १६३२में ३१६० ग्रन्थाग्र प्रमाण चरित रचा। उदयवीरगणि(सं० १६५४)की रचना गद्यात्मक है जो आठ अध्यायोंमें विभक्त है। सकलकीर्तिका पार्श्वनाथपुराण १५वीं शतीका तथा वादिचन्द्रका १७वीं शतीका है। चन्द्रकीर्तिने अपना पुराण सं० १६५४में रचा जो करीब ३००० ग्रंथाग्र प्रमाण है तथा इसमें कुल १५ सर्ग हैं। अपभ्रंशमें प्रथम रचना पद्मकीर्तिकी सं० ९९२की १८ संधि-प्रमाण मिलती है। इसके पश्चात् दूसरी अपभ्रंश रचना श्रीधर की सं० ११८९की मिलती है। असवालका पार्श्वनाथपुराण १३ संधि प्रमाण है जो १५वीं शतीके आसपासकी रचना मानी जाती है। रइधूका भी पार्श्व पर एक पुराण उपलब्ध है।

चरम तीर्थंकर महावीरके जीवन पर प्राकृत काव्य रचयिताओंमें सर्वप्रथम नाम गुणचन्द्रगणिका (सं० ११३९) आता है जिनकी रचना ८ सर्गोंमें निबद्ध है। ये सुमतिवाचकके शिष्य थे। द्वितीय काव्यकार देवेन्द्रगणि उर्फ नेमिचन्द्रसूरि (वि० सं० ११४१) है जिनका ग्रंथ ३००० ग्रन्थाग्र प्रमाण है। अन्य चरितकारोंमें मानदेवसूरिके शिष्य देवप्रभसूरि तथा जिनवल्लभसूरिके नाम आते हैं। संस्कृत काव्योंमें प्रथम नंबर असग(११वीं शती)के सन्मतिचरित्र अथवा वर्धमानचरित्रका है जो १८ सर्गोंमें विभक्त है। सकलकीर्तिका वर्धमानपुराण (सं० १५१८) १९ सर्गोंमें पाया जाता है। यह रचना ३०३५ ग्रन्थाग्र प्रमाण है। महावीरपुराणकारोंमें पद्मनन्दि, केशव, वाणीवल्लभ इत्यादिके नाम भी उल्लेखनीय हैं। अपभ्रंशमें रइधूका सम्मइणाहचरिउ १० संधियोंमें निबद्ध है। जयमित्रका ११ संधिवाला वड्ढमाणकव्वु मिलता है। नरसेनकी वड्ढमाणकहा भी मिलती है। ये सभी रचनाएँ १६वीं शतीके आसपासकी ठहरती हैं। दो अपभ्रंश कृतियाँ और पायी जाती हैं एक अनाम तथा द्वितीय जिनेश्वरसूरिके एक शिष्यकी। पहली २४ तथा दूसरी १०८ कडवक प्रमाण है।

इन अतीतके तीर्थंकरोंके अलावा आगामी जिन अममके जीवन पर भी एक रचना सं० १२५२-की रत्नसूरिकी उपलब्ध है।

इन जिनचरितोंमें तत्त्कालीन जो चक्रवर्त्ती, बलदेव वासुदेव व प्रतिवासुदेव हुए उनका भी वर्णन प्रायः समाविष्ट है, अतः उनके जीवन पर पृथक् पृथक् रचनाएँ बहुत कम मात्रामें उपलब्ध हैं। जो कुछ भी स्वतंत्र रचनाएँ मिलती है उनके नाम इस प्रकार हैं—

सगरचक्रिचरित १२वीं शतीसे पूर्वकी एक अनाम प्राकृत रचना है। जिनपालकृत सनत्कुमार चरित्र २२०३ ग्रन्थाग्र प्रमाण एक संस्कृत रचना है तथा चन्द्रसूरिकी ८१२७ ग्रन्थाग्र प्रमाण सं० १२१४की रचना है। चक्रवर्त्ती सुभौमके जीवन पर रत्नचन्द्र (सं० १६८३) तथा पं० जगन्नाथकी संस्कृत कृतियाँ उपलब्ध हैं। हरिषेणचरित्र प्राकृत व अपभ्रंशमें मिलते हैं, परंतु अनाम। जयचक्रि-पुराण ब्र० कामराजकी सं० १५६०की १३ सर्ग वाली एक संस्कृत रचना है। प्राकृतमें एक अनाम जयचक्रि-चरित भी उपलब्ध है।

त्रिषष्टि शलाका पुरुषोंके अतिरिक्त धार्मिक वीरपुरुष, श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविका और कुछ काल्पनिक पात्रोंके जीवन संबंधी जो रचनाएँ की गयीं उनको भी प्रायः चरितकी संज्ञा ही दी गयी है। फिर भी कुछ ऐसी भी कृतियाँ उपलब्ध हैं जिनको पुराण भी कहा गया है, जैसे अगडदत्त-पुराण, कुबेर-पुराण, श्रेणिक-पुराण, गजसिंह-पुराण इत्यादि। ऐसी रचनाओंका विवरण यहां पर विवक्षित नहीं होनेके कारण उनका यहां पर समावेश नहीं किया गया है।

उपर्युक्त विवरणसे स्पष्ट है कि जैन पुराण साहित्य विपुल मात्रामें उपलब्ध है। अभी भी ग्रन्थ-भंडारोंमें बहुत-सी कृतियाँ पड़ी हुयी हैं जिनका प्रकाशन नहीं हुआ है। साहित्यप्रेमियों तथा जैन समाज-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

को इनके प्रकाशनकी सुचारु व्यवस्था करनी चाहिए जिससे यह अप्रकाशित रूपमें ही लुप्त न हो जाय जैसा कि जैन परम्परामें होता आया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूचि

१ आदिपुराण, जिनसेनाचार्य।
२ जिनरत्नकोश, प्रो० ह० दा० वेलणकर, पूना।
३ जैन-ग्रन्थ-प्रशस्ति-संग्रह, प्रथम भाग, श्री जु० कि० मुख्तार, दिल्ली।
४ प्राकृत साहित्यका इतिहास, डॉ० जगदीशचन्द्र जैन, बनारस।
५ भारतीय संस्कृतिमें जैनधर्मका योगदान, डा० हीरालाल जैन, भोपाल।
६ राजस्थानके जैन शास्त्रभण्डारोंकी ग्रन्थसूचि, भाग १–४, जयपुर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org